AMOGHVARTA

ISSN : 2583-3189

स्वदेशी आन्दोलन में बंगाल के महिलाओं की भूमिका

ORIGINAL ARTICLE

Authors
कु. अनुपम
शोधार्थी
इतिहास विभाग
महात्मा गांधी काशी विद्यापीठ वाराणसी, उत्तर प्रदेश

डॉ. अरुणेश कुमार
शोध निर्देशक
असिस्टेंट प्रोफेसर
इतिहास विभाग
लालता सिंह राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय
अदलहाट, मिर्जापुर, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार

प्रस्तुत शोधपत्र का मुख्य उद्देश्य स्वदेशी आन्दोलन में बंगाल के महिलाओं की भूमिका का अध्ययन करना है। भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में बंगाल ने वैचारिक, सांस्कृतिक और क्रान्तिकारी स्तर पर अग्रणी भूमिका निभायी है। इस क्षेत्र ने पुनर्जागरण से लेकर 1905 के स्वदेशी आन्दोलन तक देश की स्वतंत्रता की लड़ाई को दिशा और ऊर्जा प्रदान की। बंगाल में विभिन्न क्रान्तिकारी गतिविधियों में महिलाओं की भागीदारी से उनकी जागृति स्पष्ट रूप से झलकती है। ब्रिटिश शासन के घातक परिणाम स्वरूप, ब्रिटिश सरकार ने राष्ट्र की रीढ़ तोड़ने के लिए ''बंगाल का विभाजन'' किया। इस घटना में ब्रिटिश सरकार की साजिश से आक्रोशित होकर पुरुष और महिला दोनों ने ही बंगाल विभाजन का विरोध प्रदर्शन किया। इस दौरान घर के भीतर रहने वाली महिलाओं ने चार दिवारी के पारम्परिक छवि को तोड़ते हुए बाहरी दुनिया में आयी और स्वदेशी चेतना से ओतप्रोत स्वदेशी आन्दोलन में शामिल हुई।

मुख्य शब्द

स्वदेशी आन्दोलन, बंगाल विभाजन, विरोध, महिलाएं, भूमिका, जागरुकता.

प्रस्तावना

बंगाल भारत के पूर्वी भाग में स्थित एक ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक रूप से समृद्ध क्षेत्र रहा है। आधुनिक काल में बंगाल भारतीय राष्ट्रीय चेतना, सामाजिक सुधार आन्दोलन तथा स्वतंत्रता संग्राम का प्रमुख केन्द्र बना, जहाँ शिक्षा, साहित्य, पत्रकारिता और सामाजिक सुधारों ने राष्ट्रीय भावना को प्रबल बनाया। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में भारत का राष्ट्रीय आन्दोलन एक नए मोड़ पर पहुंच रहा था। इस समय देश में ब्रिटिश शासन के विरुद्ध असंतोष तीव्र हो रहा था और विभिन्न वर्गों के लोग स्वतंत्रता के लिए संगठित हो रहे थे। इसी सन्दर्भ में 1905 में बंगाल विभाजन की घटना ने भारतीय राजनीति को एक नया आयाम दिया। ब्रिटिश सरकार द्वारा किये गये इस विभाजन का उद्देश्य प्रशासनिक सुधार से अधिक 'फूट डालो और राज करो' की नीति को सुदृढ़ करना था। इसके विरोध में जो आन्दोलन प्रारंभ हुआ, उसे ही स्वदेशी आन्दोलन कहा जाता है। यह आन्दोलन केवल राजनीतिक विरोध तक सीमित नहीं था, बल्कि यह आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक पुनर्जागरण का भी प्रतीक बन गया। देश के विभिन्न हिस्सों में विभाजन के विरोध में सैकड़ों सभाएँ आयोजित की गई। इस राजनीतिक उथल–पुथल से महिलायें भी प्रभावित हुई।

स्वदेशी आन्दोलन की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें समाज के हर वर्ग की भागीदारी देखने को मिली। विशेष रूप से बंगाल की महिलाओं ने इस आन्दोलन में अभूतपूर्व योगदान दिया। परम्परागत रूप से भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका घर की चारदीवारी तक सीमित मानी जाती थी, किंतु स्वदेशी आन्दोलन ने इस धारणा को चुनौती दी। बंगाल की महिलायें पहली बार बड़े पैमाने पर सार्वजनिक जीवन में उतरी और राष्ट्रीय आन्दोलन का सक्रिय हिस्सा बनीं। उनकी भागीदारी केवल एक राजनीतिक घटना नहीं थी, बल्कि यह भारतीय समाज में महिला जागरण और सशक्तिकरण का भी एक महत्वपूर्ण चरण था। उन्होंने विदेशी वस्त्रों और वस्तुओं का बहिष्कार किया, स्वदेशी कपड़े अपनाये और घर–घर जाकर स्वदेशी वस्तुओं के उपयोग का प्रचार किया। महिलायें अपने घरों में चरखा चलाकर कपड़ा बनाने लगीं और इससे स्वदेशी उद्योगों को प्रोत्साहन मिला। इसके अतिरिक्त उन्होंने सार्वजनिक सभाओं, जुलूसों और प्रदर्शनों में भी भाग लिया, जो उस समय के सामाजिक मानदंडों के विरुद्ध एक साहसिक कदम था। बंगाल में भारी तादाद में लोगों ने विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करने की प्रतिज्ञा ली। स्वदेशी प्रदर्शनियाँ आयोजित की गई, स्वदेशी समर्थक नाटक खेले गये, और विदेशी वस्तुओं का ढेर लगाकर लोगों ने उन्हें जला दिया। इन कार्यक्रमों में महिलाओं ने सक्रिय भूमिका निभायी। महिलाओं ने अब चर्खे से सूत काटने का काम अधिक उत्साह से किया। घर–घर से राष्ट्रीय स्वदेशी फंड के लिए मुट्ठी भर अनाज व आभूषण–दान हुआ। बंगाल में सरोजनी बोस और कुमुदिनी मित्तर ने भाषण दिये, सभाएँ आयोजित की व लाखों महिलाओं को स्वदेशी आन्दोलन के साथ जुड़ने के लिए प्रोत्साहित किया।[1]

इस दौरान भारत का दौरा करने वाली श्रीमती रैमसे मैकडोनाल्ड ने पाया कि 'यह आन्दोलन पुरुषों के साथ–साथ महिलाओं में भी समान रूप से फैल रहा है'। ब्रिटिश लेखक वैलेंटाइन चिरोल ने दर्ज किया कि "विद्रोह ने जनाना (महिलाओं के कमरे) में अपनी मजबूत पकड़ बना ली है और पर्दा प्रथा के पीछे रहने वाली हिन्दू महिला अक्सर अपने पति और बेटों पर उस ब्रिटिश महिला की तुलना में अधिक प्रभाव डालती है जो दुनिया भर में स्वतंत्र रूप से घूमती है। मुझे बताया गया है कि बंगाल में तो इतने छोटे लड़के भी जो अभी भी जनाना में घूमते हैं, उन्हें भी राजद्रोह की पूरी प्रक्रिया सिखायी गई है और वे छोटे पीले वस्त्र पहनकर सन्यासियों के रूप में घर–घर जाकर अंग्रेजों के प्रति घृणा का प्रचार करते हैं"।[2]

सन् 1904 से कांग्रेस के मध्यम वर्ग ने विभाजन की योजनाओं के विरुद्ध याचिकाएं दायर करके धरना एवं प्रस्ताव पारित कर अभियान चलाया। सन् 1905 के कुछ महीनों तक यह तरीके प्रभावित रहे, परंतु आन्दोलन की कमजोरी के कारण जुलाई 1905 से विरोध का स्वरूप बदल गया। अगस्त में अंग्रेजी वस्तुओं के बहिष्कार का निर्णय लिया गया तथा 16 अक्टूबर को विभाजन दिवस मनाया गया, जिसमें रवींद्रनाथ टैगोर ने बंगाल विभाजन की शुरुआत में 'राखी बंधन' उत्सव की शुरुआत की थी। राखी बंधन के जरिये भाईचारे का संदेश दिया गया। बंगाल के बंटवारे पर विरोध प्रदर्शित करने के लिए विभाजन दिवस पर लोगों ने अपने घरों में चूल्हे नहीं जलाएं।[3]

अगस्त 1905 के बाद स्त्रियों की सहभागिता की खबरें आने लगी। रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी के "आरंधन उत्सव" ने विभाजन आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी को विशेष रूप से प्रभावी बनाया। बंगाल की महिलाओं ने रामेन्द्रसुन्दर के आह्वान पर घर–घर जाकर बंगाल विभाजन के खिलाफ विरोध प्रदर्शन किया। अब तक घर के अंदर रहने वाली महिलायें भी विरोध में घर से बाहर निकल प्रदर्शन किया। इस दौरान आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी के महत्वपूर्ण प्रमाण 'संजीवनी' पत्रिका में मिलते हैं। इस पत्रिका से पता चलता है कि बंगाल विभाजन के दिन 24 अगस्त 1905 को कोलकाता के फेडरेशन हाल के आधारशिला के दिन ब्रह्मा गर्ल्स स्कूल की बालकनी में महिलाओं की उपस्थिति उल्लेखनीय थी। लगभग इस कार्यक्रम को 500 स्त्रियों ने देखा उसी दिन मुर्शिदाबाद जिले में स्थित रामेन्द्रसुन्दर त्रिवेदी के गांव में स्त्रियों की एक सभा बुलायी गई जिसमें बांग्ला लक्ष्मी व्रत कथा हुई। व्रत कथा का उद्देश्य ग्रामीण स्त्रियों में स्वदेशी का संदेश पहुंचाना था। वहां मौजूद महिलाओं ने मातृभूमि के प्रति श्रद्धा व्यक्त करते हुए अपने हाथों में पहनी विदेशी चूड़ियों को तोड़ दिया।[4] इस दौरान एक उल्लेखनीय घटना घटी बंगाल के विभाजन के विरोध में अगस्त 1907 में जब विवेकानन्द के भाई भूपेन्द्र नाथ दत्ता गिरफ्तार कर लिये गये इसके विरोध में, प्रसिद्ध चिकित्सक नीलरतन सरकार ने अपने घर पर ही एक विशाल महिला सभा आयोजित की। भूपेन्द्र नाथ दत्त के प्रति सम्मान प्रदर्शित करते हुए 200 महिलाओं ने हस्ताक्षर किया तथा उनकी माता को वह हस्ताक्षर पत्र भूपेन्द्रनाथ दत्त के मुकदमे के कानूनी खर्च की भरपाई के लिए धन इकठ्ठा करके दिये गये।[5] इसी प्रकार से फरवरी 1906 ई० में पूर्वी बंगाल के हबीगंज और भोला नमक शहरों में महिलाओं द्वारा आयोजित एक प्रदर्शन और विरोध सभा को बिपिन चन्द्र पाल ने सम्बोधित किया। इसके साथ ही बड़ी साल में वृहद मानव कार्यो में लिप्त अश्विनी कुमार दत्त की स्वदेशी बांधव समिति को स्वदेशियों के लिए स्त्रियों ने अपनी बचत पूंजी सौंप दी।[6]

बंगाल के विभाजन की शुरुआत से लेकर उसके प्रसार तक, महिलाओं ने विभाजन–विरोधी आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभायी। उन्होंने सभाओं में भाग लिया, विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार किया, ब्रिटिश दुकानों के सामने धरना दिया, घरेलू सामान का उपयोग किया, चरखे काटे आदि। इस आन्दोलन में कई प्रमुख महिला व्यक्तित्व भी उभरकर सामने आये जैसे सरला देवी, सिस्टर निवेदिता, कादम्बिनी गांगुली, कुमुदिनी मित्तर, लीलावती मित्रा, सरोजनी बोस आदि महिलाओं ने न केवल आन्दोलन में सक्रिय भाग लिया बल्कि अन्य महिलाओं को प्रेरित करने में विशेष भूमिका निभायी है।

सरला देवी (1872–1945)

सरला देवी (1872–1945) महिलाओं के सामने आने वाली विभिन्न बाधाओं और पितृसत्तात्मक समाज की घृणा के बावजूद राजनीतिक क्षेत्र में अपनी जगह बनाने में सफल रही। सरला देवी रवींद्रनाथ टैगोर से जुड़ी हुई थीं, सरला देवी ने अपना बचपन जोरासांको के ठाकुरबाड़ी में बिताया, जहाँ उनके मन में स्वदेशी का विचार जागृत हुआ। 1886 ई० में मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण की, उसके बाद 1890 में अंग्रेजी ऑनर्स से उत्तीर्ण की उसके बाद बंगाल के सुप्रसिद्ध 'पत्र भारती', 'हिन्दुस्तान' नामक पत्रों का संपादन किया। इस पत्रिका के माध्यम से उन्होंने बंगाली युवाओं को राष्ट्रवाद की रोशनी में उजागर किया।[7] सरला देवी ने आम मेहनती लोगों को निडर होकर ब्रिटिश शासन के खिलाफ खड़े होने का आह्वान किया। अंग्रेजी में ऑनर्स के साथ बीए उत्तीर्ण करने के बाद, उन्होंने मैसूर के राजा द्वारा संचालित महारानी गर्ल्स स्कूल में एक वर्ष के लिए शिक्षिका के रूप में कार्य किया, लेकिन स्वदेशी विचारधारा से प्रेरित होकर देशभक्ति और परिवार की आर्थिक स्थिति के कारण उन्होंने नौकरी छोड़ दी और कलकत्ता लौट आयी। अपनी आत्मकथा में सरला देवी ने लिखा, ''स्वतंत्रता का जुनून व्यापक हो गया और राष्ट्रीय स्वतंत्रता जुनून का रूप ले लिया। जुनून अब केवल जुनून नहीं रह गया था, बल्कि एक उद्देश्य का रूप ले लिया था।'' इसके साथ ही सरला देवी की नजर में भारतीयों की शारीरिक कमजोरी और कायरता पर पड़ी। उन्होंने समकालीन बंगाली समाज की इस कायरता की कड़ी निंदा की। उन्होंने कहा, ''मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्ति बंगाली पैतृक जीवन को जीवित रखना है, अर्थात् एक मजबूत और स्वस्थ शरीर। इसीलिए मैं चाहती हूं कि बंगाली भारत के अन्य राष्ट्रों की तरह नियमित रूप से व्यायाम करें।''[8] सरला देवी यहीं नहीं रुकी, उन्होंने शारीरिक शक्ति के साथ–साथ चरित्र निर्माण और मानसिक विकास पर भी जोर दिया। उन्होंने पंजाब के महान पहलवानों का जिक्र किया, जो शारीरिक रूप से मजबूत होते हुए भी अंग्रेजों से भयभीत थे। भारतीय पुरुषों के इस कायरता के खिलाफ नारे लगाते हुए कहा, गोरे लोगों का डर दूर करना होगा। शायद इसी पृष्ठभूमि में सरला देवी ने बंगाल के युवाओं को व्यायाम उपलब्ध कराने के लिए एक शारीरिक प्रशिक्षण केन्द्र या व्यायामशाला खोली। इस केन्द्र में प्रोफेसर मुर्तजा नामक एक विशेषज्ञ लाठी चलाने और तलवारबाजी का अभ्यास कराते थे। इसी केन्द्र में ढाका की अनुशीलन समिति से जुड़े पुलिन बिहारी दास ने लाठी, चाकू और तलवार चलाने का बुनियादी प्रशिक्षण प्राप्त किया। सरला देवी ने बाद में इसी केन्द्र में बीरष्टमी उत्सव का आयोजन किया, जिसके माध्यम से विभिन्न प्रकार की शारीरिक तकनीकों और व्यायाम कौशल का प्रदर्शन किया जाता था। यह उत्सव दुर्गा पूजा के दूसरे दिन मनाया जाता था,[9] जिसमें युवक शस्त्र कौशल का प्रदर्शन करते थे। विजेता युवकों को मुर्शिदाबाद के तत्कालीन नवाब की विधवा पत्नी की द्वारा दस्ताने, लाठी, चाकू और बीरष्टमी पदक दिये जाते थे। उसी वर्ष उन्होंने कलकत्ता कांग्रेस में वंदेमातरम गवाकर इतिहास रच दिया। 1905 में सरला देवी की मैमन सिंह सुहृद समिति ने वंदेमातरम को राष्ट्रीय आह्वान के रूप में प्रयोग करने का पहला प्रयास किया था।[10]

सुहृद समिति की शुरुआत 1901 में मैमन सिंह जिला में एक परोपकारी संस्था के रूप में हुई थी। 1905 में श्री अरबिंदो घोष, सुबोध मालिक और बिपिन चंद्र पाल के मैमन सिंह यात्रा और श्रीमती रामभोज दत्त के प्रबल प्रभाव के बाद इस संगठन का स्वरूप पूरी तरह बदल गया। समिति के सदस्य सरला देवी को अपना नेता मानते थे।[11]

1905 में बंगाल के विभाजन से बहुत पहले, सरला देवी ने स्वदेशी विचारधारा को बढ़ावा देने के लिए 1890 के दशक में विभिन्न प्रदर्शनियों और विपणन केन्द्रों की स्थापना की थी। इसी प्रेरणा से रवींद्रनाथ का ''स्वदेशी भंडार'' (1897), योगेश चंद्र चौधरी का ''इंडियन स्टोर्स'' (1901) और सरला देवी का ''लक्ष्य भंडार'' (1903) निर्मित हुए। इसी दौरान 26 नवंबर को बैरकपुर में जब पंका नामक एक कुली की गोरों के हाथों मृत्यु हो गई, तो सरला देवी ने स्वयं धन एकत्र किया और मृतक की विधवा को सौंप दिया।[12] इस प्रकार सरला देवी ने औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध विरोध किया और अपनी मातृभूमि के प्रति निष्ठा से प्रेरित होकर विभिन्न प्रकार के जन कल्याणकारी कार्यो में स्वयं को संलग्न किया। सरला देवी इस बात का एक उल्लेखनीय उदाहरण थी कि कैसे महिलायें पुरुष प्रधान समाज को प्रेरित करने में सक्षम थीं।[13]

सिस्टर निवेदिता

सिस्टर निवेदिता एक आयरिश महिला नागरिक थीं। स्वामी विवेकानन्द की शिष्या भगिनी निवेदिता ने भूपेन्द्र नाथ दत्ता की जमानत करायी थी। सन 1902 में विवेकानन्द की मृत्यु के पश्चात बहन निवेदिता अरविन्द घोष और नरेन्द्र दत्त के सम्पर्क में आयी। उनके राष्ट्रीय क्रान्तिकारी संगठन से प्रभावित होकर उस क्रान्तिकार संगठन की सदस्य बन गई। 1905 में उन्होंने रविन्द्र नाथ तथा वीरेन्द्र नाथ दत्त के साथ मिलकर काम किया 1996 की बाढ़ एवं पूर्वी बंगाल में पड़े अकाल के समय भगिनी निवेदिता ने लोगों सहायता की थी। स्वदेशी आन्दोलन के समय गांव – गांव घूम कर स्वदेशी प्रचार किया। इस दौरान उन्होंने महिलाओं की सभाएं आयोजित करके उन्हें अन्य कार्यों के अलावा चरखा काटने की सलाह भी दी।[14] निवेदिता के भाषण से प्रभावित होकर पर्दे में रहने वाली अनेकों स्त्रियों ने भी चरखे खरीद कर उन्हें चलाना शुरू कर दिया। एक अंग्रेज आलोचक ने शिकायत करते हुए लिखा कि "ऐसा दिखाई पड़ता है कि विद्रोह ने महिलाओं पर अपनी पकड़ मजबूत कर दिये तथा पर्दे में रहने वाली हिन्दू स्त्रियां अपने पतियों तथा पुत्रों पर अपने प्रभाव का व्यापक प्रयोग करती हैं। बंगाल में छोटी – छोटी उम्र यहां तक की अपने माता के पास रहने वाले बच्चों को भी राजद्रोह का पाठ पढ़ाया जाता है तथा उन्हें सन्यासी के वेशभूषा में घर – घर जाकर अंग्रेजों के प्रति घृणा फैलाने को प्रेरित किया जाता था।[15]

डॉ. कादम्बिनी गांगुली (1862–1923)

डॉ. कादम्बिनी गांगुली कलकत्ता विश्वविद्यालय से स्नातक होने वाली पहली महिला और कलकत्ता मेडिकल कॉलेज से डॉक्टर बनने वाली पहली महिला थीं। वह 1889 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के पांचवें अधिवेशन में छह महिला प्रतिनिधियों में से एक थीं, और उन्होंने बंगाल के विभाजन के बाद 1906 में एकता दिखाने के लिए कलकत्ता में महिला सम्मेलन आयोजित किया[16] और 1908 में इसकी अध्यक्षता की। उन्होंने सक्रिय रूप से सत्याग्रह को बढ़ावा दिया और उसी वर्ष श्रमिकों के समर्थन के लिए धन जुटाने के लिए व्यक्तियों को संगठित किया। उन्होंने ट्रांसवाल इंडियन एसोसिएशन के अध्यक्ष के रूप में दक्षिण अफ्रीका में भारतीयों की ओर से भी लगातार काम किया।[17]

कुमुदिनी मित्रा

कुमुदिनी मित्रा जो कोलकाता विश्वविद्यालय की स्नातक और महाभारत स्त्री महामंडल की सचिव थी। उन्होंने शिक्षित महिलाओं और 35 वर्ष से अधिक आयु की पत्नी और विधवाओं को मताधिकार देकर महिला मतदाताओं की संख्या बढ़ाने की का प्रस्ताव रखा।[18] उन्होंने राजनीति मुद्दों से कम परिचित महिलाओं में राष्ट्रवादी भावना जगाने के लिए सुप्रभात और बंगाल लक्ष्मी की संपादक कुमुदिनी मित्रा ने किया जिसमें 'मातृभूमि संकट में हो तो महिलाओं को क्या करना चाहिए' शीर्षक से एक निबंध में संकेत दिया कि भारतीयों को विदेशी वस्त्रों का त्याग कर देना चाहिए क्योंकि यह देश के लिए हानिकारक था इसके अलावा उन्होंने हिन्दू महिलाओं से विदेशी वस्तुओं की खरीद बंद करने का आग्रह किया। मित्रा के शब्दों में यदि पूजा के मौसम में करोड़ों रुपए के ब्रिटिश वस्तुओं का ढेर बिना बिके रह जायेगा तो इसका प्रभाव इंग्लैंड में महसूस होगा और सरकार बंगाल के विभाजन के आदेश को वापस लेने के लिए विवश हो जायेगी। इन निबंधों के माध्यम से महिलाओं को स्वदेशी आन्दोलन के लिए प्रोत्साहित किया।[19]उन्होंने स्वयंभी शिक्षित ब्राह्मण स्त्रियों का एक गुट तैयार किया जो भूमिगत क्रान्तिकारियों के मध्य सूचनाओं का आदान – प्रदान करता था।[20]

लीलावती मित्रा

लीलावती मित्रा नामक एक ब्राह्मण महिला थी, जिसने विद्यासागर को 1872 में पारित विशेष विभाग कानून के तहत सन 1890 के दशक में विधवा पुनर्विवाह कराने में सहायता की थी और उन्होंने क्रान्तिकारी छात्रों की सहायता की थी। उनके पति कृष्ण कुमार बोस मित्रा को जब अंग्रेजों ने स्वदेशी आन्दोलन में उनकी सक्रियता के कारण 1808 में देश से बाहर निकाल दिया तब सरकार के इस कदम का विरोध करते हुए लीलावती मित्रा ने सरकार द्वारा दी जाने वाली मासिक गुजारा भत्ता की आर्थिक सहायता ठुकरा दी। सन 1909 में अरविंद घोष के जेल से रिहा होने के बाद लीलावती मित्रा ने अपने घर में शरण दी थी परंतु सन् 1911 में अपने पति के रिहाई के बाद उन्होंने राष्ट्रवादी गतिविधियों से खुद को अलग कर लिया तथा अपना सारा ध्यान ब्राह्मणवाद के प्रसार पर केन्द्रित कर लिया।[21]

सरोजनी बोस

सरोजनी बोस तारा प्रसन्ना बोस की पत्नी थी। स्वदेशी आन्दोलन के लिए उन्होंने प्रतिज्ञा ली थी कि जब तक वंदेमातरम के नारे के प्रयोग पर प्रतिबंध लगाने वाला परिपत्र वापस नहीं लिया जाता, तब तक वे सोने की चूड़ियाँ नहीं पहनेंगी।[22]

शोध का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्देश्य केवल ऐतिहासिक घटनाओं की पुनरावृत्ति नहीं है, बल्कि उनके पीछे निहित कारणों और विचारधाराओं का विश्लेषण करके एक व्यापक ऐतिहासिक समझ विकसित करना है जो आज के वर्तमान में राष्ट्रवाद और लोकतंत्र की जड़ों को भी उजागर करता है। स्वदेशी आन्दोलन भारतीय इतिहास की एक ऐसी घटना थी जिसे उपनिवेशवाद के विरुद्ध संगठित प्रतिरोध की चेतना को जन्म दिया। इसका उद्देश्य इस विद्रोह की बहुआयामी प्रकृति को समझना और उसका समग्र विश्लेषण करना है। इसके अध्ययन के अंतर्गत निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किये गये हैं:

1. स्वदेशी आन्दोलन में विभिन्न प्रमुख महिलाओं जैसे सरला देवी, सिस्टर निवेदिता, कादम्बिनी गांगुली, कुमुदिनी मित्तर, लीलावती मित्रा, सरोजनी बोस आदि की भूमिका को समझना और उनके नेतृत्व की विशेषताओं का विश्लेषण करना।
2. ब्रिटिश शासन द्वारा अपनाई गई सैन्य प्रशासनिक और दमनात्मक नीतियों की समीक्षा करना।
3. स्वदेशी आन्दोलन के तत्कालिक और दीर्घकालिक परिणामों को चिन्हित करना।

शोध पद्धति

यह शोध पत्र द्वितीय स्रोतों पर आधारित है, इसमें ऐतिहासिक, गुणात्मक, विवरणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। शोध में प्रमुख रूप से प्राचीन तथा आधुनिक ऐतिहासिक स्रोतों से आंकड़ा संग्रहित किया गया है, जिससे स्वदेशी आन्दोलन की घटनाओं व प्रवृत्तियों का वास्तविक एवं तुलनात्मक मूल्यांकन किया जा सके। आधुनिक इतिहासकारों द्वारा लिखित शोध पुस्तकों, पत्रिकाओं, शोध पत्र, ऐतिहासिक लेखों और आलोचनात्मक व्याख्याओं को आधार बनाकर विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है।

निष्कर्ष

इस प्रकार सामाजिक बंधनों, पारम्परिक मान्यताओं और पारिवारिक जिम्मेदारियों के कारण उन्हें कई कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, फिर भी, उन्होंने इन बाधाओं को पार करते हुए आन्दोलन में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई। स्वदेशी आन्दोलन में बंगाल की महिलाओं की भूमिका केवल एक ऐतिहासिक घटना नहीं थी, बल्कि यह भारतीय समाज में महिला सशक्तिकरण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम था। महिलाओं ने न केवल आन्दोलन को मजबूत किया, बल्कि उन्होंने भारतीय समाज में एक नई चेतना का संचार भी किया। स्वदेशी आन्दोलन में महिलाओं की भागीदारी ने भारतीय समाज में कई महत्वपूर्ण परिवर्तन लाए, जिससे महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार हुआ और उन्हें एक नई पहचान मिली। उन्होंने आत्मनिर्भरता और आत्मसम्मान की भावना विकसित की। इसके साथ ही, इस आन्दोलन ने भारतीय स्वतंत्रता संग्राम को एक व्यापक आधार प्रदान किया, जिसमें महिलाओं की सक्रिय भागीदारी सुनिश्चित हुई।

सन्दर्भ सूची

1. मल्होत्रा, दीप्ति प्रिया (2001) *भारतीय महिला आन्दोलन कल आज और कल,* प्रकाशन सम्पूर्ण ट्रस्ट, नई दिल्ली, पृ. 35।
2. चोपड़ा, पी. एन. (1975) *वूमेन इन द इण्डिया फ्रीडम स्ट्रगल.* मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन एंड सोशल वेलफेयर गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 7।
3. सरकार, सुमित (1989) *मॉडर्न इंडिया,* मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, अंसारी रोड, नई दिल्ली, पृ. 112।
4. सरकार, सुमित (1973) *द स्वदेशी मूवमेंट इन बंगाल 1903–1908.* मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ. 271।
5. कौर, मनमोहन (1968) *रोल ऑफ़ वूमेन इन द फ्रीडम मूवमेंट 1857–1947.* स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ. 97।
6. सरकार, सुमित (1973) *द स्वदेशी मूवमेंट इन बंगाल 1903–1908.* मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ. 288।
7. गोस्वामी, सुधा (2003) *भारत की चर्चित महिलाएं.* उपकार प्रकाशन, आगरा, पृ. 209।
8. चौधरानी, सरला देवी (2010) *दी मनी वर्ल्ड ऑफ़ सरला देवीः ए डायरी,* ट्रांसलेटेड फ्रॉम दी बंगाली जीवनर झारापता राय सूखेन्दु, सोशल साइंस प्रेस, नई दिल्ली, पृ. 109।

9. उपरोक्त, पृ. 132।

10. कुमार, राधा (2022) *स्त्री संघर्ष का इतिहास (1800 – 1990).* वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 92।

11. उपरोक्त, पृ. 91।

12. महापात्र, पद्मालय; विजयिनी, महंती (2002) *एलीट वूमेन ऑफ इंडिया.* ए. पी. एच. पब्लिशिंग कॉरपोरेशन, नई दिल्ली, पृ. 64।

13. सरकार, सुमित (1973) *द स्वदेशी मूवमेंट इन बंगाल 1903–1908.* मैकमिलन इण्डिया लिमिटेड, नई दिल्ली, पृ. 470।

14. कौर, मनमोहन (1968) *रोल ऑफ़ वूमेन इन द फ्रीडम मूवमेंट 1857–1947.* स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ. 100–101।

15. उपरोक्त, पृ. 97।

16. बसु, अपर्णा (2018) *वूमेन इन सत्याग्रह.* मिनिस्ट्री ऑफ इनफॉर्मेशन एण्ड ब्रॉडकास्टिंग गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 12।

17. सेन, बी. के.; गांगुली, कादम्बिनी बोस (2014) *एन इल्लुस्ट्रियस लेडी.* साइंस एंड कल्चर, खंड 80, अंक 9–10, इंडियन साइंस न्यूज़ एसोसिएशन, कोलकाता, पृ. 273।

18. फॉर्ब्स, गेराल्डिन (2005) *वूमेन इन कॉलोनीयन इंडिया.* क्रॉनिकल बुक्स एन इंप्रिंट ऑफ डीसी पब्लिशर्स, नई दिल्ली, पृ. 70।

19. चक्रवर्ती, पल्लवी (2024) *आर्गेनाइजेशन इन बंगाल.* रूटलेज इंडिया, लंदन एंड न्यूयार्क।

20. कौर, मनमोहन (1968) *रोल ऑफ़ वूमेन इन द फ्रीडम मूवमेंट 1857–1947.* स्टर्लिंग पब्लिशर्स प्राइवेट लिमिटेड, दिल्ली, पृ. 97।

21. चक्रवती, उषा (1963) *कंडीशन ऑफ़ बंगाली वूमेन अराउंड दी सेकंड हाफ ऑफ़ द 19जी सेंचुरी.* उषा चक्रवती (स्व–प्रकाशित), कोलकाता, पृ. 133।

22. चोपड़ा, पी. एन. (1975) *वूमेन इन द इण्डिया फ्रीडम स्ट्रगल.* मिनिस्ट्री ऑफ एजुकेशन एंड सोशल वेलफेयर गवर्नमेंट ऑफ इंडिया, नई दिल्ली, पृ. 7।

——==00==——